UGC-CARE Listed ISSN: 2349-4654

नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूजिक वर्ष : 10, अंक : 1, जून 2022

विष्णुधर्मोत्तर पुराण में विष्णु द्वारा एकार्णव काल में जल-परिक्रमा करते हुये नृत्तोत्पत्ति की कथा

वेदांगी

शोधार्थी, कथक संकाय, श्री श्री यूनिवर्सिटी कटक, उड़ीसा

Paper received on : December 29, February 19, April 14, Accepted on July 09, 2022

सार-संक्षेप

विष्णुधर्मोत्तरपुराण ललित कलाओं के अध्ययन के लिए एक महत्व पूर्ण ग्रन्थ है। इस पुराण के तीसरे खण्ड में काव्य, संगीत, चित्र, मूर्ति, शिल्प, स्थापत्य कलाओं की विस्तृत चर्चा की गई है। संगीत के अंतर्गत गायन, वादन तथा नृत्त का विवरण प्राप्त होता है। यह सारी कलायें परस्पर सम्बधी तथा परस्परावलबी होने की चर्चा के साथ-साथ इनके विशेष क्रम की भी चर्चा पुराण में प्राप्त होती है। नृत्त की उत्पत्ति की जो कहानी इस पुराण में प्राप्त होती है जो अन्य किसी भी ग्रन्थ में प्राप्त नहीं होती। नृत्त विषयक ज्यादातर चर्चा भरतमुनी के नाट्यशास्त्र पर ही आधारित है परंतु जहाँ अन्य ग्रंथों ने नृत्त को शिव जी से उत्पादित माना है यहाँ विष्णु द्वारा निर्मित कहा गया है; यही नहीं सृष्टि से भी पूर्व नृत्त की उत्पत्ति की चर्चा की गई है। भगवान विष्णु द्वारा मधू-कैटभ राक्षसों के वध की कहानी जो अन्यत्र कई पुराणों आदि में प्राप्त होती है उसी को विष्णुधर्मोत्तर में उद्धृत किया गया है परंतु नृत्त उत्पत्ति को भी इस कथा से जोड़ा गया है। नृत्त के महत्व को प्रतिपादित करते हुये इसके आध्यात्मिक महत्व को भी पुराणकार ने बताया है, जो की नाट्यशास्त्र से संपूर्णतः भिन्न है। नाट्यशास्त्र ने जहाँ नाट्य प्रदर्शन के फल की बात की है वही विष्णुधर्मोत्तर पुराण ने नृत्त को देवाराधना का साधन माना है तथा नृत्त से वृत्ति करने वालों का धिक्कार किया है, और मूर्खों को उपदेश देने वाला, स्त्रियों का सौभाग्य वर्धक, शान्तिक, पौष्टिक, काम्य नृत्त वासुदेव के द्वारा निर्मित बताया है तथा नृत्तदान करने की बात कही है। इस शोध पत्र का उद्देश उक्त कथा को उजागर करना है जो अन्य ग्रंथों से भिन्न प्रतीत होती है। इस शोध पत्र हेतु विवरणात्मक तथा विश्लेषणात्मक अनुसंधान प्रणालियों का आधार लिया गया है।

मुख्य शब्द : विष्णुधर्मोत्तर, नृत्त, मार्कण्डेय, विष्णु, पुराण, नृत्तोत्पत्ति

शोध-पत्र

संगीत आदि कलाओं का आद्य लक्षण ग्रन्थ नाट्यशास्त्र को माना गया है तथा तदुपरांत अनेक ग्रन्थों का निर्माण नाट्य शास्त्र को आधार बनाकर किया गया है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण भी इनमे से एक है। इस पुराण की कई पाण्डुलिपियाँ आज उपलब्ध है जिनमे से पाँच भारत मे, एक नेपाल तथा एक बांग्लादेश में स्थित है। नृत्तोत्पत्ति की जो कथा इस पुराण के तृतीय खण्ड के 34 वे अध्याय में वर्णित है वह संपूर्णतः अलौकिक है। ललित कलाओं के परस्पर सम्बन्ध को प्रतिपादित करते समय 'नृत्तसूत्रम्' अभिधान से 15 अध्याय पुराण के तृतीय खण्ड में प्राप्त होते है जिसमें से नृत्तसूत्र का अंतिम अध्याय तथा खण्ड का 34 वाँ अध्याय नृत्तोत्पत्ति की कथा को अभिवर्णीत करता है। विष्णुधर्मोत्तर का अभिभाग होने के कारण अन्य ग्रन्थों से भिन्न भगवान विष्णु को ही नृत्त का जनक माना गया है। मधू कैटभ दैत्यों के वध की कथा को यहाँ पुराणकार ने नृत्तोत्पत्ति से जोड़ा है। यह कथा नाट्यशास्त्र के 22 वे अध्याय में भी प्राप्त होती है, परन्तु नाट्यशास्त्रकार ने उसे भारती इत्यादि वृत्तियों के उत्पत्ति के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। कैशिकी वृत्ति का जनक विष्णु को कई ग्रन्थो ने माना है परन्तु 'नृत्त' को विष्णु द्वारा निर्मित मानना तथा उसके श्रेष्ठत्व को वर्णित कर ईश्वरोपासना का साधन मानना नूतन है। नृत्त से देवताओं का आराधन करना, मोक्ष प्राप्ति का साधन कह कर दान करना संपूर्णतः नाट्यशास्त्र से भिन्न है। नृत्तोत्पत्ति की यह कथा नृत्त की प्राचीनता तथा तत्कालीन महत्व को दर्शाती है।

नृत्तोत्पत्ति की कथा[1]

नृत्तोत्पत्ति की कथा मूल ग्रंथ के उपलब्ध न होने पर इसे डॉ. पुरुदाधीच की नृत्यसूत्रम् से उद्धरित की जा रही है, जो कि निम्नलिखित है–''द्वापर युग के अंत में जब देवता पृथ्वी पर आना बन्द कर देते है तो कृष्ण के प्रपौत्र राजा वज्र को मार्कण्डेय ऋषि देवाराधना हेतु मंदिर निर्माण का विधान बताते है, जो की ललित कलाओं के एक विशिष्ट्य क्रम को दशार्ता है। इसी क्रम में चित्रसूत्र को जानने के लिये नृत्तसूत्र का ज्ञान आवश्यक होने की बात करते है। नृत्तसूत्र जानने के बाद राजा वज्र अपनी शंका के निरसन के लिये मार्कण्डेय ऋषि से प्रश्न करते है की नृत्त किसके द्वारा उत्पादित है? ऋषियों के द्वारा या

देवताओं के द्वारा? इस प्रश्न के उत्तर में मार्कण्डेय ऋषि नृत्तोत्पत्ति की ये कथा सुनाते है–एक बार एकार्णव काल में स्थावर जंगम के साथ सम्पूर्ण लोक नष्ट हो जाने पर विष्णु शेष शैया पर सो रहे थे, लक्ष्मी उनके चरण-सेवा कर रही थी तभी उनकी नाभि से कमल उत्पन्न हुआ और चतुर्मुख ब्रह्माजी कमल से उत्पन्न हुए।

फिर भगवान विष्णु के पदमोद्विन्दु से रात्री के घोर अंधकार के समान भयानक रजो तथा तमो गुण युक्त मधू-कैटभ दैत्य उत्पन्न हुए, और उन्होंने ब्रह्मा जी से वेद छीन लिए, जिससे ब्रह्मा जी नेत्रहीन तथा बलहीन प्रतीत हो रहे थे, ब्रह्माजी के प्रसन्न करने पर विष्णु जल में उठकर जलाशय पर सललित अंगहारों, आयत लोचन से पद परिक्रमा करने लगे। यह देख माँ लक्ष्मी के मन में विशेष राग उत्पन्न हुआ। भगवान फिर अश्वशिर होकर पाताल में चले गए, मधू-कैटभ अश्वशिर को पकड़ने के लिए वेद छोड़ कर झपटे तब विशालकाय दैत्यों का संहार कर विष्णु ने वेद ब्रह्मा जी को प्रदान किये तथा सृष्टि की रचना करने के लिए कहा। वेदों के प्रमाण से ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की। शेषांक में गये विष्णु से तब लक्ष्मी पूछती है कि जल परिक्रमा करते समय अतिशय ललित, रमणीय आपके अंगों को मैंने देखा वह क्या था?

नृत्तमुत्पादितं ह्येतन्मया पद्मनिभेक्षणे।
अङ्गहारैः सकरणैः संयुक्तं स परिक्रमैः।।

भगवान कहते है–मैंने अंगहार, करण, परिक्रमा से युक्त त्रैलोक्य का अनुकरण करने वाला 'नृत्त' उत्पादित किया है। पश्चात् नृत्त के महत्व तथा उपयोगिता को विदित करते है।।

कथा के अन्य ग्रन्थों में उपलब्ध संदर्भ

नृत्त उत्पत्ति की जो कथा विष्णुधर्मोत्तर पुराण में प्रस्तुत की गयी है उसे ही नाट्य शास्त्र के द्वाविंशति अध्याय में वृत्तियों के उद्गम के प्रसंग में निहित किया गया है। यहाँ विशेष उल्लेखनीय यह है कि नाट्य शास्त्र ने भगवान शिव को नृत्त का सृजनकर्ता माना है। नाट्य शास्त्र के व्याख्याकार श्री बाबू लाल शुक्ल शास्त्री[2] के अनुसार सम्पूर्ण जगत को लीन कर भगवान विष्णु के द्वारा योग निद्रा में अवस्थित रहने का यह उपाख्यान वाल्मीकि रामायण के सप्तम काण्ड तथा मार्कण्डेय पुराण में भी मिलता है। उक्त श्लोक देखिए–

शुद्धैरविकृतैडगैः साङ्गहारैस्तथा भृशम्
योधयामासतुदैत्यौ युद्धमार्ग विशारदौ।।

अर्थ : फिर युद्ध करने में चतुर उन दैत्यों से भगवान विष्णु ने उपर्युक्त आंगिक चेष्टाओं तथा अंगहारों के साथ युद्ध किया। इन्हीं आंगिक चेष्टाओं तथा अंगहरों से नृत्त की उत्पत्ति होने की बात विष्णु धर्मोत्तर पुराण में प्राप्त होती है। परंतु नाट्य शास्त्र में यह कथा भारती वृत्ती के

नृत्त → नृत्त → नृत्त

अंतर्गत प्राप्त है जब की नृत्त का कैशिकी वृत्ती के अंतर्गत समावेश प्राप्त होता है। जो कि बाबू लाल शास्त्री लिखित नाट्य शास्त्र में इस प्रकार मिलती है–जब भगवान विष्णु द्वारा मधु एवं कैटभ नामक दोनों असुरों का वध कर दिया गया तो शत्रु के नाशक हरि ब्रह्माजी से बोले–हे देव! आपने विभिन्न सुस्पष्ट, प्रभावशाली आश्चर्योत्पादक तथा सुकुमार अंगहारों के द्वारा इन असुरों का संहार किया इसलिए यही युद्ध में चलाये जाने वाले (प्रयुक्त होने वाले) सभी शस्त्रों का आदर्श होकर संसार में 'न्याय' नाम से विख्यात होगा। जब से यह (युद्ध में) अंगहारों का प्रयोग किया गया, जो अंगहार न्यायों से उत्पन्न हुये थे और न्याय पूर्वक देखे गए थे। इसलिसे (तभी से) व्यवहार में ये 'न्याय' के नाम से प्रसिद्ध हो गये।''[3] ये न्याय इसलिए कहलाते है क्यों की ये रंगमंच पर युद्ध को उन अंगहारो सहित नियमित करते है–जो इन्हीं (न्याय) से उत्पन्न होते है। न्याय के चार प्रकार–भारत, सात्वत, वार्षगव्य, कैशिक। इस प्रकार विभिन्न चारी द्वारा निर्मित इन न्यायों से अनेक शस्त्रों को चलाने के अवसर पर अभिनेताओं द्वारा रंगमंच पर विशिष्ट गतियों से चलना दृष्टव्य है।[4] चारी से नृत्त व्याप्त है, चारी से ही हलचल (गती आदि) की जाती है तथा शस्त्रों का फेंकना और युद्ध करना भी चारी के द्वारा ही प्रस्तुत होता है। चारी से नृत्त व्याप्त है। चारी से ही युद्ध प्रस्तुत होता है। शस्त्र आदि को धारण जो चारी की जाती है उसे न्याय कहते है। नाट्य शास्त्र की इसी संकल्पना को मार्कण्डेय ऋषि ने नृत्त के उत्पत्ति से जोड़ा है। यह निश्चित ही विष्णु धर्मोत्तर पुराण होने की वजह से भगवान विष्णु का ही सर्वत्व प्रस्थापित करने के लिये संभव है। नृत्त हस्तों के विषय में विद्वानों ने कहा है की, नृत्त हस्त 'नृत्त' क्रिया के अन्य उपादान जैसे करण, चारी, स्थान, मंडल, रेचक अंगहार आदि के साथ ही सदैव प्रस्तुत होते है। स्वतंत्र रूप से नहीं, अतः यह कहा जा सकता है की इसकी संरचना ''समतोलपन'' के आधार पर की गयी है। ये नृत्त हस्त शरीर के विभिन्न अवयवों के सामंजस्य पूर्ण संतुलन के द्वारा ही अलौकिक आभा का सृजन कर लावण्य को साधते है। इन्हीं नृत्त के तत्वों को पुराणकार ने जलमग्न पृथ्वी पर नृत्त करते मधुसूदन पर प्रस्थापित किया है। पूर्व अध्येताओं के मतानुसार भरत मुनि ने 'नाट्य' की शिक्षा ब्रह्मा तथा 'नृत्त' की शिक्षा शिव जी से प्राप्त की थी। ये दोनों ही आरंभिक अवस्था में थी। परंतु विष्णुधर्मोत्तर नृत्त को विष्णु द्वारा ब्रह्मा जी को फिर ब्रह्मा जी द्वारा शिव जी को प्रदान करने की बात करता है। यहाँ विशेष उल्लेखनीय यह है की नृत्त की उत्पत्ति तो विष्णु से मानी है परंतु 'नृत्तेश्वरत्व' शिव जी को ही प्रदान किया है। पुराण की कतिपय प्रतियों में नृत्त भेद भी 'नाट्य' और 'लास्य' ही प्राप्त होते है हालाँकि पुराण में अन्यत्र ताण्डव के संदर्भ निश्चित ही उपलब्ध है। डॉ. पुरु दाधीच की पुस्तक कथक नृत्य शिक्षा में यह कथा इस प्रकार

मिलती है। संगीत रत्नाकर में लास्य उत्पत्ति कथा इस प्रकार प्राप्त होती है की देवी पार्वती जी ने लास्य नृत्य प्रचलित किया, जिसकी शिक्षा को बाणासुर की पुत्री उषा को प्रदान किया। उसके बाद उषा से द्वारिका की रमणियों ने इसकी शिक्षा प्राप्त की।[5] आगे चलकर वे कहते हैं–यहाँ विशेष वर्णनीय यह है कि नाट्य शास्त्र में केवल शिव जी द्वारा निर्मित ताण्डव नृत्य का ही वर्णन प्राप्त है, पार्वती द्वारा निर्मित लास्य नृत्य के विषय में नहीं। अभिनय दर्पण के अनुसार शिवजी के प्रमुख गण 'तण्डू' या 'नन्दि' ने भरत मुनि को ताण्डव नृत्य की शिक्षा दी थी।[6] उपरोक्त सभी कथाओं से भिन्न नृत्त उत्पत्ति की कथा विष्णुधर्मोत्तर पुराण में प्राप्त होती है।

कुशीलव और नृत्तदान

भारतीय कलाओं को समाज का प्रतिबिंब कहा जाता है। पारूल दवे की पुस्तक में कुमार स्वामी का एक उद्धरण इस प्रकार है। कुमारस्वामी कहते है ''भारतीय कलायें एक स्वतन्त्र, दृश्य जगत पर निर्भर तथा मानसचित्र पटलों पर आधारित है।''[7] विष्णुधर्मोत्तर पुराण में कुशीलव शब्द का नृत्त करनेवालों के लिये प्रयोग किया गया है। निम्नलिखित श्लोक में इस बात की पुष्टि होती है। लेकिन कुशीलवों के द्वारा नृत्त को अर्थार्जन का साधन बनाने का निषेध करना उनके तत्कालीन सामाजिक स्तर को दर्शाता है।

नृत्तेन वृत्तिं यः कुर्यात्स तु वर्ज्यः प्रयत्नतः।
कुशीलवाद्यैर्यः कुर्यान्नुत्तविक्रयकारकाः।।

नृत्त से वृत्ति को प्रयत्नपूर्वक वर्ज्य करना चाहिये। ऐसा करने वाले कुशीलव नृत्त को बेचने वाले है। नृत्त को भगवान विष्णु से ही प्रणीत मानकर नृत्त को पेशा न बनाकर केवल ईश्वरोपासना का माध्यम मानना अतिशय महत्वपूर्ण है।[8] इस संदर्भ में 'कुशीलव' शब्द के विविध ग्रंथों में प्राप्त अर्थ को देखना होगा। शारदा तनय के अनुसार वाणी और अंगों की चेष्टाओं द्वारा अनेक प्रकार की भूमिकाओं के यथा प्रकृति संधान में कुशक होने के कारण ही ये 'कुशीलव' कहे जाते है।[9] शब्द कल्पद्रुम में कुशीलव–'कुत्सितं शीलं अस्य इति कुशीलः।' यह उक्ति प्राप्त होती है।[10]

"As in Nritta, so in Citra also the imitation of three words is enjoined O the best of kings as in Nritta, in Citra also, the eyes and the expressions, the limbs and the parts all over and the hand poses which are described in the dance (Nrittta), should be learnt because Nritt and Citra are considered as excellent."[11]

नृत्त में तीन ही लोकों के अनुकरण की बात कही है और नृत्त को ही चित्र का आधार बताया गया है, यही नहीं सर्वोत्तम भी कहा गया है। नृत्त की सामाजिक महत्ता जिससे प्रतीत होती है। जायसेनापति नृत्त करने के विविध प्रसंग कथन करता है, जो सारे के सारे मंगलमय है, जैसे की विवाह, जन्म, राज्याभिषेक, जल क्रीड़ा, विजयी होकर राज्य में आगमन करना, गृह प्रवेश, प्रियकर से मिलन, पूजा-अर्चना, उपहार का प्रदान करना, खुशी या उल्हास का प्रदर्शन करना, किसी ईप्सित वस्तु को प्राप्त कर लेना, सफलता तथा समृद्धि के अवसर पर तथा कोई भी पावन पर्व पर और सबसे ज्यादा भगवान के पूजन के समय, जो की अत्यंतिक योग्य या संयुक्तिक समझा जाता है।[12] इस प्रसंग में उल्लेखनीय यह है की परवर्ती ग्रंथकारों ने नृत्त को अभिनय वर्जित कहा है जब की विष्णुधर्मोत्तर ने त्रैलोक्य का अनुकरण। *गात्रविक्षेपमात्रं तु सर्वअभिनयवर्जितम् आंगिकोक्त प्रकारेण नृत्तं नृत्तविदो विदुः।*[13] *नृत्त लक्षणमाह-गात्रेति। अभिनयं विना केवलगात्र विक्षेपो नृत्तमित्युच्यते।।* नृत्तं पुरुष कृतं ज्ञेयं नृत्यं नारीकृतं तथा। इति नृत्त रत्नावली। नृत्त की परिकल्पना में भिन्नता प्रतीत होती है। अस्तु यह पूर्णतः भिन्न विषय है। 'नृत्तदान' करने की बात बताकर मार्कण्डेय ऋषि नृत्त के महत्व को प्रतिपादित करते है।

पुराण में प्राप्त नृत्त का महत्व

मधु-कैटभ दैत्यों के वध के प्रसंग में विष्णु द्वारा उत्पादित नृत्त के महत्व को भी मार्कण्डेय ऋषि बताते है वे कहते है की नृत्त से जो विष्णु का पूजन करते है उनसे देव विशेष रूप से प्रसन्न होते है। पूर्व अध्येताओं के मतानुसार–'विष्णुधर्मोत्तर पुराण समग्र रूप से वैष्णव मान्यताओं का पुराण है। वैष्णव मान्यताएँ जीवन के सम्बन्ध में अनेक नियम और उपनियमोंका विधान करती है। यह पुराण भावों अर्थात कर्मक्षेत्र की उपलब्धियों समादित ऐसे ही धर्म और संस्कृति अर्थात जीवन के कर्मक्षेत्र का विवरण देता है।'[14] पुराण कहता है नृत्त से जो देवताओं का आराधन करता है वह ईप्सित वस्तु को पाकर मोक्ष का उपाय ढूँढ लेता है। मूर्खों के लिये उपदेशक, नारियों का सौभाग्य वृद्धिंगत करनेवाला, शान्तिक, पौष्टिक, काम्य नृत्त स्थावर जंगम नष्ट होनेपर वसुदेव द्वारा निर्मित है। जिससे यश प्राप्ति, आयुष्य और स्वर्गलोक को प्राप्त किया जा सकता है। देवताओं के लिये विलास का साधन परंतु मनुष्य के लिये आप्तजनों का दुखः निवारण करने वाला यह नृत्त है। भक्तिमन्त नृत्त से मेरा आराधन करे।

नृत्त के महत्वपूर्ण बिन्दु

- अंगहार, करण, परिक्रमा से युक्त है।
- त्रैलोक्य का अनुकरण करने वाला है।
- लक्ष्य एवं लक्षणों से युक्त है।
- नृत्त समृद्ध यज्ञ का फल प्रदान करने वाला है।
- इप्सित वस्तुओं की प्राप्ति तथा मोक्ष का उपाय नृत्त से प्राप्त होता है।
- यश, आयुष्य, स्वर्ग लोक प्राप्ति, देवताओं के लिये विलासपूर्ण आर्तजनों का दुःखविनाशक नृत्त है।
- मूर्खों को उपदेशकारक, स्त्रियों के लिये सौभाग्य वर्धक, शान्तिक, पौष्टिक, काम्य नृत्त है।

- लोक कल्याण के लिये विष्णु द्वारा नृत्त निर्माण किया गया है।
- नृत्त से दोनों लोकों को जीता जा सकता है।
- देवताओं को परं आप्यायित करने वाला है।
- नृत्त से पूजन करने से केशव विशेष रूप से प्रसन्न होते है।

विष्णु पुराण का अंश होने से विष्णु को ही नृत्त का प्रणेता मान्य किया गया है लेकिन सर्वमान्य भगवान शिव के नृत्तेश्वर होने की बात को पुराणकार अमान्य नहीं कर सके। विष्णु द्वारा निर्मित नृत्त ब्रह्मा जी ने शिव को देने तथा उन्होंने नृत्त से मधुसूदन को प्रसन्न कर नृत्तेश्वरत्व प्राप्त करने की बात वैष्णव और शैव मतों में समानता का प्रतीक प्रतीत होती है।

निष्कर्ष और भविष्य में शोध संभावनाएँ

विष्णुधर्मोत्तर पुराण के मत अनुसार नृत्त भगवान विष्णु द्वारा सृष्टि के निर्माण पूर्व ही लोक कल्याण के लिये उत्पादित किया गया है, परन्तु नृत्तेश्वरत्व शिव को ही प्राप्त है। नृत्त से केवल विष्णु ही नहीं से अपितु सभी देव प्रसन्न होते है, मनुष्य को नृत्त से देवाराधना करनी चाहिये ना कि उसे व्यवसाय बनाना चाहिये। नृत्त की उपासना अत्यंत फलदायी है। दुखः निवारण से लेकर मोक्ष प्राप्ति तक अनेक फायदे नृत्त से प्राप्त हो सकते है।भविष्य में इस कथा का अन्य ग्रंथों में प्राप्त कथाओं से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। अन्य ग्रंथों से भिन्न यह पुराण नृत्त को भक्ति मार्ग से जोड़ता है, मनोरंजन से नहीं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. विष्णुधर्मोत्तर पुराण में नृत्तोत्पत्ति की कथा उद्धृत, दाधीच, पुरू, नृत्यसूत्रम्, बिन्दु प्रकाशन, 1990
2. शुक्ल शास्त्री, बाबूलाल, नाट्यशास्त्र, चौखंभा संस्कृत संस्थान, वि सं 2074. खं 3, पृ. 95
3. वही, पृ. 99.
4. वही, खण्ड 2, पृ 95.
5. दाधीच, पुरू, कथक नृत्य शिक्षा भाग 2, बिन्दु प्रकाशन, तृतीय संस्करण 2004.
6. दाधीच, पुरू, अभिनय दर्पण, बिन्दु प्रकाशन, द्वितीय संस्करण 2010 पृ 17.
7. Coomarswami, taken from Parul Dave Mukharji, The Citrasutra of The Vishnudharmottar Purana, IGNCA,2001 .
8. नारायण, कपिलदेव, विष्णुधर्मोत्तरमहापुराणम् चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस वाराणसी, 2015.
9. तिवारी शशि, शारदातनय का भावप्रकाशन, कैशिकी प्रकाशन आगरा, । 1984, पृ 288.
10. श्रीवरदा प्रसाद वसुना, श्रीहरि चरण वसुना, शब्दकल्पद्रुमः, चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस वाराणसी, संस्करण तृतीय, सं 2024.
11. Shah, Priyabala, Vishnu Dharmottar Puran, The New Order Book Co, Krishna Printery, Ahmedabad.
12. Coomaraswamy k Ananda, The Dance of Shiva, New York Noonday press, 1957, p12.
13. Sangitaratnakara of Sarangadeva, edited by Subrahmanya Sastri Pandit S, The Adyar Library,1953.
14. तिवारी अलका, विष्णुधर्मोत्तर पुराण में प्रतिबिम्बित समाज एवं संस्कृति, प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद 1993. पृ 19–21.
15. Chatterjee sastri, Asok, Visnudharmottarapuranam, Varanaseya Sanskrit Vishvavidyalaya,Varanasi, 1971.
16. दाधीच, पुरू, नृत्य निबंध, बिन्दु प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2009.
17. Kramrisch, Stella, The Vishnudharmottar (part III), Calcutta University press, 1928.